‘पत्रकारों को लाख टके का मशविरा’

आलेख - राजीव श्रीवास्तव

इन दिनों मीडिया की आजादी को लेकर खूब सवाल उठ रहे हैं। सवाल नया नही है। बस, अनुगूंज तेज है। सवाल यह भी हो रहा है - ‘मीडिया को सबकुछ कहने की आजादी है?’ दिल्ली से लेकर सुबों - और कस्बे की पत्रकारिता तक में इस प्रश्न की गूंज भी आम हो चुकी है कि - ‘क्या मीडिया, सरकार की तीखी आलोचना कर सकता है?’ यह भी पूछा जा रहा है, ‘क्या मीडिया अघोषित आपातकाल से गुजर रहा है?’ लोकतंत्र के चौथे स्तंभ से जुड़े इन तमाम सवालों के - मीडिया जगत से साबका रखने वालों के पास भिन्न-भिन्न जवाब हैं।

भारतीय पत्रकारिता की मौजूदा दशा और दिशा को लेकर उठ रहे तमाम सवालों के जवाब खोजने या पूछे जाने के पहले, देश के ख्यातनाम पत्रकार और नेता अरुण शौरी द्वारा देश में टीवी चैनलों को ‘उत्तर कोरिया का मीडिया’ कहा जाना - अथवा अन्य प्रबुद्धजनों द्वारा इसे ‘गोदी मीडिया’ का नाम दिये जाने पर गौर फरमाना होगा। मीडिया कभी मिशन हुआ करता था। आज विशुद्ध व्यवसाय में तब्दील हो चुका है। सभी व्यावसायी हो गये हैं, ऐसा कदापि नहीं है। मगर बड़ी तादाद - मीडिया के जरिये अपने हितों को साधने अथवा ‘शुभ-लाभ’ को पहला मकसद बना लेने वालों की हो गई है - यह कहने में मुझे कोई गुरेज नहीं।

आशय सीधा है - मीडिया की दुर्गति के लिए यदि कोई सबसे ज्यादा जिम्मेदार है, तो खुद मीडियाजगत, और इससे जुड़े बहुधा संख्या वाले वे लोग - जो सिर्फ और सिर्फ ‘शुभ-लाभ’ का जरिया इसे बनाये हुए हैं। यह भी कह सकते हैं, बनाने में जुटे हुए हैं। शायद ही कोई ऐसा फील्ड आज बचा है, जिसकी कार्यशैली को लेकर सवाल ना उठाये जा रहे हों। हर तरफ ऐसा ही माहौल है। चूंकि मीडिया को लोकतंत्र का चौथा स्तंभी कहा जाता है, लिहाजा स्वयं के अवमूल्यन को लेकर सबसे ज्यादा निशाने पर आज वह है। काजल की कोठरी में रहकर बेदाग निकल जाने के उदाहरण आज बिरले या विलुप्तप्राय हो चले हैं।

उम्मीद की किरण नहीं छोड़ रहे हैं। उम्मीदें बाकी हैं। जिम्मेदार लोग हैं। आज भी मीडिया को मिशन बनाकर काम करने वाले लोग हैं। मगर इनकी संख्या ऊंगलियों मात्र पर हैं। बदले हुए दौर में सोशल मीडिया सरीखा का बड़ा हथियार लोकतंत्र के चौथे खंबे में नये टिमटिमाते बल्ब की मानिंद टिमटिमाना आरंभ हो चुका है। आपाधापी बढ़ी है। फेंक न्यूज रूपी दानव भी मीडिया जगत में तेजी से विद्रूपता फैला रहा है। जबरदस्त बदनामी वाले दौर में मीडिया की परेशानियां बढ़ा रहा है।
मीडिया को टूल की तरह उपयोग करने के आरोप आम हो गये हैं। सरकारों के नजरिये में बड़े बदलाव के आरोप भी बढ़े हैं। विज्ञापन के एवज में समाचार पत्र/चैनल या ऐसे अन्य माध्यमों के स्पेस का उपयोग सरकार द्वारा अपनी ‘आत्म-मुग्धता’ के लिए किये जाने का चलन बढ़ता जा रहा है। आलोचना बर्दाश्त नहीं करना। नीयत और नीति में कमियां बताने वाले मीडिया को साइड लाइन कर दिया जाना। विज्ञापन रोक देना। संबंधित रिपोर्टर/संपादक को बदलवा देना या नौकरी से निकलवा देना - साधारण बातें हो गई हैं।
ऐसा नहीं है कि ताली एक हाथ से बज रही है। दूसरा हाथ बराबर साथ दे रहा है। मीडिया के अपने लोगों ने सरकारों को रास्ते बतलाये हैं। मालिकानों को जुगतबाजी में लिप्त किया या कराया है। शेर की सवारी की तरह सबकुछ हुआ है। अब ‘शेर’ पूरी तरह से ‘सवार’ पर हावी हो चुका है। राजनेताओं और सरकारों को ‘आईना’ (मीडिया को समाज का आईना माना जाता रहा है और मीडिया की आलोचना को सरकार के लिए भूल सुधार के तौर पर लिया जाता रहा है - को) देखना अब गंवारा ही नहीं रहा है।

आलोचना बर्दाश्त न होने संबंधी तमाम खबरों के बीच - मध्यप्रदेश से, मीडिया के लिए उम्मीदों का नया सवेरा होता नजर आया है। प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री कमलनाथ ने मीडिया को लाख टके का मशविरा दिया है। उन्होंने कहा है, ‘स्वस्थ लोकतंत्र के लिए

स्वतंत्र मीडिया-स्वतंत्र प्रेस बहुत जरूरी है।' मंच - पत्रकारिता जगत के पुरोधा पंडित माखनलाल चतुर्वेदी के नाम से स्थापित पत्रकारिता विश्वविद्यालय का था।

विश्वविद्यालय की स्थापना के 30वें प्रवेश वर्ष के अवसर पर हालिया आयोजन 'उत्कृष्टता की ओर' में मुख्यमंत्री श्री नाथ ने एक उत्कृष्ट बात यह भी कही कि - 'पत्रकारों को प्रलोभन या दबाव देकर स्वयं की प्रशंसा कराने की परिपाटी किसी भी सूरत में उचित नहीं है। हम चाहते हैं, जहां सरकार गलत हो - उसकी स्वस्थ आलोचना बेखौफ होकर निष्पक्षता के साथ करने में प्रेस तनिक भी हिचकिचाये नहीं। निष्पक्ष और निडर होकर सवाल पूछे।'

मुख्यमंत्री की सलाह पर बहस हो सकती है। मगर उनका मशविरा गौर फरमाने योग्य है - ऐसा मेरा अभिमत है। लंबे वक्त बाद किसी राजनेता के श्रीमुख से मीडिया के लिए ऐसे विचार (सरकार को आईना दिखाने में गुरेज न करने संबंधी मशविरा) बुनने और गुनने योग्य माने जायेंगे। दरअसल, जिम्मेदारी से बचने और अपनी सुविधा के लिए मीडिया का गला 'बेदर्दी से घोंटने' की तेजी से बढ़ती प्रवृत्ति के बीच - स्वस्थ आलोचना का 'संदेश' - 'झुलसा देने वाली गर्मी, हाड़ को कंपकपा देने वाली सर्दी और डूबो देने वाली बारिश' के हालातों में बुरी तरह फंसे होने के बीच, अचानक राहत मिल जाने की तरह भी दिखलाई पड़ रहा है।

वस्तुत: वर्तमान दौर की पत्रकारिता में मुख्यधारा का पत्रकार बने रहना सबसे बड़ी चुनौती है। पत्रकारिता के समक्ष चुनौतियों को इस तरह से भी समझा जा सकता है कि 60 और 70 के दशक में बड़ी संख्या में लोग इंजीनियर, प्रोफेसर, शिक्षक की नौकरी छोड़कर पत्रकार बनते थे। आज कोई छोटी सी भी सरकारी नौकरी या बेहतर अवसर मिलते ही, लोग पत्रकारिता छोड़ देते हैं। बड़ी संख्या में 40 से 50 की उम्र में पत्रकार मुख्यधारा से बाहर हो रहे हैं। यह कहना कतई गलत नहीं होगा कि वर्तमान मीडिया में वाद है, विवाद है - परंतु संवाद गायब होता जा रहा है।

देश में विभिन्न भाषाओं 400 से अधिक न्यूज चैनल हैं। दस हजार से अधिक अखबार प्रकाशित हो रहे हैं। इसके बावजूद हकीकत यही है कि मीडिया की आजादी को लेकर एक अंतरराष्ट्रीय संस्था द्वारा कराए गए एक विश्लेषण में 180 देशों की सूची में भारत का क्रम 140वें स्थान पर आया है। मीडियाकर्मी का लक्ष्य क्या होता है? कोई व्यक्ति मीडिया में क्यों आता है? यह निरंतर चिंतन का महत्वपूण पक्ष बनते जा रहा है।

अंत में - यह कहना गलत नहीं होगा कि वर्तमान में मीडिया की भूमिका पर समाज की चिंता जायज है। मौजूदा हालातों से उबरने और पुराने दौर में वापसी के लिए मीडिया तथा इस जगत से जुड़े प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं आगे बढ़कर अपनी भूमिका निर्धारित करनी होगी।

मीडिया का महत्व था, है और आगे भी रहेगा....एक साथी - कामरेड की लिखी पंक्तियां - चौथे स्तंभ के महत्व को रेखांकित करने के लिए उपयुक्त मानी जा सकती हैं :-

धरा बेच देंगे गगन बेच देंगे
कली बेच देंगे चमन बेच देंगे
कलम के सिपाही अगर सो गए तो
वतन के 'मसीहा' वतन बेच देंगे।

(इति)

(प्रस्तुति: मनुज फीचर सर्विस)

नोट: विचार लेखक के अपने हैं, इन विचारों की जिम्मेदारी माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय नहीं लेता।